



2026:AHC: 169093

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

आपराधिक अपील संख्या - 2448/1987

बिशंभर और अन्य

.....अपीलार्थी(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

.....प्रत्यर्थी(गण)

अपीलार्थी(गण) के अधिवक्ता : गंगा भूषण मिश्रा, एस.ए.एन. शाह

प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता : ए.जी.ए.

न्यायालय संख्या- 75

माननीय न्यायमूर्ति डॉ. गौतम चौधरी

1. इस अपील में तीन अभियुक्त थे, अर्थात् बिशंभर, अतर सिंह और साधु। दो अभियुक्तों, अतर सिंह और साधु के लिए यह अपील 23.08.2022 के आदेश द्वारा पहले ही उपशमित हो चुकी है। अब वर्तमान अपील केवल अपीलार्थी, बिशंभर के विरुद्ध शेष है, जिस पर सुनवाई की जा रही है और निर्णय लिया जा रहा है।

2. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री गंगा भूषण मिश्रा, राज्य के लिए विद्वान ए.जी.ए. श्री जयराम पांडेय को सुना गया और अवर न्यायालय के अभिलेखों सहित अभिलेख पर लाई गई सामग्री का परिशीलन किया गया।

3. यह अपील विद्वान विशेष न्यायाधीश, डकैती प्रभावित क्षेत्र, एटा द्वारा विशेष सत्र परीक्षण संख्या 822 वर्ष 1983 (राज्य बनाम बिशंभर और अन्य), जो थाना जी.आर.पी., जिला कासगंज के मुकदमा अपराध संख्या 90 वर्ष 1982, भारतीय दंड संहिता की धारा 399, 422 और आयुध अधिनियम की धारा 25 से उत्पन्न हुआ है, में पारित दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश दिनांक 16.09.1987 के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा शेष अपीलार्थी, बिशंभर को धारा 399/

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



402 के अंतर्गत तीन वर्ष के कठोर कारावास और आयुध अधिनियम की धारा 25 के अंतर्गत एक वर्ष के कठोर कारावास से दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया है, और यह निर्देश दिया गया है कि सभी दण्डएं साथ-साथ चलेंगी।

4. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया है कि वह अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि और विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए तथ्य के निष्कर्षों का विवाद नहीं कर रहे हैं और उन्होंने अपना तर्क केवल दण्ड के संबंध में सीमित रखा है। यह प्रस्तुत किया गया कि घटना वर्ष 1982 में हुई थी और तब से 44 वर्ष का समय बीत चुका है। मामले के तथ्यों का संदर्भ देते हुए, यह प्रस्तुत किया गया कि अवर न्यायालय द्वारा दी गई दण्ड का पर्याप्त हिस्सा अभियुक्त-अपीलार्थी द्वारा पहले ही भुगता जा चुका है और इस प्रकार, दण्ड को पहले ही भुगती गई अवधि तक कम किया जा सकता है।

5. विद्वान ए.जी.ए. ने तर्क दिया है कि अभियुक्त-अपीलार्थी की दोषसिद्धि साक्ष्य पर आधारित है और आक्षेपित निर्णय और आदेश में कोई अवैधता या विकृति नहीं है।

6. मैंने प्रतिद्वंद्वी अभिवेदनों पर विचार किया है और अभिलेख का परिशीलन किया है।

7. अभिलेख के परिशीलन से पता चलता है कि यह डकैती की योजना बनाने और पुलिस पार्टी पर गोली चलाने का मामला है। अभियोजन पक्ष द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने के बाद, विद्वान विचारण न्यायालय ने अभियुक्त-अपीलार्थी को, जैसा कि ऊपर कहा गया है, दोषसिद्ध किया है।

8. जहां तक दण्ड के प्रश्न का संबंध है, यह प्रेक्षण किया जा सकता है कि किसी विशेष अपराध के लिए दण्ड तय करते समय, न्यायालय को अपराध की प्रकृति, उन परिस्थितियों जिनमें यह किया गया था, और अपराधी द्वारा दिखाए गए विचार-विमर्श के स्तर को ध्यान में रखना चाहिए। अपराध की प्रकृति और उसे निष्पादित या कारित करने के तरीके को ध्यान में रखते हुए उचित दण्ड देना न्यायालय का कर्तव्य है। उचित दण्ड लगाने पर विचार करते समय न्यायालयों को न केवल अपराध की पीड़िता के अधिकारों बल्कि व्यापक समाज को भी ध्यान में रखना चाहिए। *देव नारायण मंडल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2004) 7 एससीसी 257* में यह टिप्पणी किया गया था कि दण्ड न तो अत्यधिक कठोर होनी चाहिए और न ही हास्यास्पद रूप से कम। दण्ड की मात्रा निर्धारित करते समय, न्यायालय को आनुपातिकता के सिद्धांत को ध्यान में रखना चाहिए। दण्ड

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



किसी दिए गए वाद के तथ्यों पर आधारित होनी चाहिए। अपराध की गंभीरता, अपराध करने के तरीके, अभियुक्त की आयु और लिंग को ध्यान में रखा जाना चाहिए। दण्ड देने में न्यायालय के विवेक का प्रयोग मनमाने ढंग से या सनक में नहीं किया जा सकता है।

9. *श्याम नारायण बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली), (2013) 7 एससीसी 77* में, यह इंगित किया गया था कि किसी भी अपराध के लिए दण्ड देने का एक सामाजिक लक्ष्य होता है। अपराध की प्रकृति और अपराध करने के तरीके को ध्यान में रखते हुए दण्ड दिया जाना है। दण्ड देने का मूल उद्देश्य इस सिद्धांत पर आधारित है कि अभियुक्त को यह एहसास होना चाहिए कि उसके द्वारा किए गए अपराध ने न केवल पीड़िता के जीवन में सेंध लगाई है बल्कि सामाजिक ताने-बाने में भी एक खोखलापन पैदा किया है। न्यायोचित दण्ड का उद्देश्य यह है कि समाज को ऐसे अपराध से दोबारा पीड़ित न होना पड़े। किए गए अपराध और लगाए गए दंड के बीच आनुपातिकता के सिद्धांत को ध्यान में रखा जाना है। समग्र रूप से समाज पर पड़ने वाले प्रभाव को देखा जाना चाहिए। *सुमेर सिंह बनाम सूरजभान सिंह, (2014) 7 एससीसी 323, पंजाब राज्य बनाम बावा सिंह, (2015) 3 एससीसी 441, और राज बाला बनाम हरियाणा राज्य, (2016) 1 एससीसी 463* में समान विचार व्यक्त किए गए हैं।

10. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने *मध्य प्रदेश राज्य बनाम श्यामलाल और अन्य, प्रतिवेदित 2025 लाइव लॉ (एससी) 333* के वाद में प्रस्तर संख्या 10, 13 और 14 में निम्नानुसार टिप्पणी किया है:-

"10. जैसा कि पहले कहा गया है, प्रत्यर्थी अभियुक्तों की दोषसिद्धि को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 से धारा 304 के दूसरे भाग में कम कर दिया गया है। उच्च न्यायालय ने अंकित किया है कि घटना 1 नवंबर 1989 की थी। विचारण न्यायालय ने 25 अप्रैल 1994 को प्रत्यर्थी-अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया। दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील इक्कीस वर्षों तक लंबित रही। यह इंगित किया गया है कि प्रत्यर्थी विचारण और अपील के दौरान जमानत पर थे। यह एक ऐसी परिस्थिति है जिस पर उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया गया है। विचार की गई दूसरी परिस्थिति यह है कि जब उच्च न्यायालय ने अपील पर सुनवाई की, तो घटना अट्ठाईस वर्ष पुरानी थी। चार अभियुक्त लगभग सत्तर वर्ष के थे, और एक लगभग अस्सी वर्ष का था, और यही कारण है कि उच्च न्यायालय द्वारा

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



प्रत्यर्थियों को उनके द्वारा भुगती गई दण्ड पर छोड़ दिया गया, और जुर्माना लगाया गया। जुर्माना लगाते समय, उच्च न्यायालय ने फता और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य 1979 एससीसी(क्रि) 629 के वाद में इस न्यायालय के एक निर्णय पर भरोसा किया। निर्णय, जिसमें केवल दो प्रस्तर हैं, इस प्रकार है:-

‘विशेष अनुमति द्वारा इस अपील में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने रमाकांत राय के अलावा अन्य अपीलार्थियों पर धारा 149 भारतीय दंड संहिता के साथ पठित धारा 302 की प्रयोज्यता के प्रश्न पर ही अपील पर जोर दिया है। यह आग्रह किया गया था कि अवर न्यायालय के निष्कर्षों के अनुसार, घटना विवादित खेत में हुई थी जिस पर दोनों पक्षों ने दावा किया था। अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, विचाराधीन खेत मृतक जनार्दन और पी.डब्ल्यू.1 के कब्जे में था और उन्होंने अरहर की फसल बोई थी और उसे काटने आए थे। उस समय अभियुक्त एक समूह में विभिन्न हथियारों से लैस होकर, अभियोजन पक्ष को बलपूर्वक बेदखल करने के उद्देश्य से घटनास्थल पर पहुंचे। ईंट-पत्थर चले और अंततः एक अभियुक्त राम सेवक, जो बंदूक से लैस था, ने एक गोली चलाई जो जनार्दन की दाहिनी आंख में लगी, जिसके परिणामस्वरूप वह गिर गया और उसकी तुरंत मृत्यु हो गई। कहा जाता है कि अपीलार्थी रमाकांत राय ने बंदूक चलाने से पूर्व राम सेवक को एक कारतूस प्रदान किया था। इसलिए, इन परिस्थितियों में, यह निष्कर्ष अपरिहार्य है कि राम सेवक और रमाकांत राय का निस्संदेह मृतक की हत्या कारित करने का सामान्य आशय था। अन्य के संबंध में, सामग्री पर, हम संतुष्ट हैं कि घटना दोनों पक्षों द्वारा दावा की गई भूमि के कब्जे को लेकर हुई थी। रमाकांत राय और राम सेवक के अलावा जमाव के किसी अन्य व्यक्ति ने मृतक पर हमले में हिस्सा नहीं लिया। यद्यपि कुछ अपीलार्थी फरसा और भाले से लैस थे और एक अपीलार्थी पिस्तौल से, लेकिन इनमें से किसी भी हथियार का उपयोग नहीं किया गया था। वर्तमान मामले की परिस्थितियों में, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि अपीलार्थी अभियोजन पक्ष को बेदखल करने और उस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए आवश्यक चोट कारित करने के लिए हथियार लेकर गए थे। लेकिन साक्ष्य यह नहीं

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



दर्शाता है कि सभी अपीलार्थियों ने जनार्दन की हत्या करने का सामान्य उद्देश्य साझा किया था। यह सच है कि केवल यह तथ्य कि विधिविरुद्ध जमाव के सदस्यों के लिए कोई प्रत्यक्ष कृत्य जिम्मेदार नहीं ठहराया गया है, धारा 149 भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत आरोप को गलत साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं है। लेकिन यह प्रश्न प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है। वर्तमान मामले में, हम संतुष्ट हैं कि अधिक से अधिक राम सेवक और रमाकांत राय के अलावा अन्य अपीलार्थियों का केवल धारा 325 भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत अपराध कारित करने का आशय था और इसलिए, वे धारा 325/149 के अंतर्गत अपराध के साथ-साथ बलवा के भी दोषी थे। दूसरा प्रश्न जो निर्धारित किया जाना है वह यह है कि अपीलार्थियों को क्या दण्ड दी जानी चाहिए। अपीलार्थियों ने केवल 3 से 4 महीने की दण्ड काटी है और वे पूरे समय जमानत पर रहे हैं। 10 वर्ष बीत जाने के बाद उन्हें वापस जेल भेजना न्याय के हित में नहीं होगा। दूसरी ओर, यदि मृतक के परिवार को भारी मुआवजा दिया जाता है, तो यह उस सामाजिक-आर्थिक उद्देश्य को पूरा करेगा जिसकी दण्ड नीति की आधुनिक प्रवृत्ति को आवश्यकता है। इसलिए, इन कारणों से, हम रमाकांत राय को छोड़कर अपीलार्थियों की दोषसिद्धि को धारा 302/149 से धारा 325/149 में बदलते हैं और दण्ड को पहले ही भुगती जा चुकी अवधि तक कम करते हैं। माफ की गई दण्ड के बदले में, हम प्रत्येक अपीलार्थी पर 5000 रुपये का जुर्माना लगाते हैं, जिसके भुगतान में व्यतिक्रम होने पर दो वर्ष का कठोर कारावास भुगतना होगा। पूरा जुर्माना, यदि वसूल किया जाता है, तो पी.डब्ल्यू.1, जनार्दन की विधवा को भुगतान किया जाएगा। धारा 147 के अंतर्गत दण्ड को भी पहले ही भुगती गई अवधि तक कम किया जाता है।

2. जहां तक रमाकांत राय का संबंध है, चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य हैं कि वह वही व्यक्ति था जिसने जनार्दन को गोली मारने के लिए राम सेवक को कारतूस की आपूर्ति की थी। इन परिस्थितियों में, रमाकांत राय को धारा 302/34 के अंतर्गत दोषसिद्ध किया जाता है और आजीवन कारावास की उसकी दण्ड को इस धारा के अंतर्गत बरकरार रखा जाता है। इस संशोधन के साथ, अपील खारिज की जाती है।



जुर्माना छह महीने में अदा किया जाएगा, जुर्माना अदा होने के बाद, अपीलार्थियों को जमानत बंधपत्रों से उन्मोचित कर दिया जाएगा।

(बल दिया गया)

13. हम इस तथ्य के प्रति सचेत हैं कि अभियुक्तों द्वारा कोई अपील प्रस्तुत नहीं की गई है। लेकिन तथ्य यह बना हुआ है कि चिकित्सीय साक्ष्य इस बारे में गंभीर संदेह पैदा करता है कि क्या प्रत्यर्थियों द्वारा कथित तौर पर पहुंचाई गई चोटों के कारण लक्ष्मण की मृत्यु हुई। इसलिए, एक गंभीर संदेह है कि क्या धारा 304 भारतीय दंड संहिता भी लागू की जा सकती थी, क्योंकि चिकित्सीय राय मृतक की मानववध के सिद्धांत का समर्थन नहीं करती है। यही कारण है कि उच्च न्यायालय के उस निर्णय में हस्तक्षेप करना संभव नहीं है जिसमें यह निर्देश दिया गया है कि प्रत्यर्थी-अभियुक्तों को धारा 304, पठित धारा 149 भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत अपराध के लिए, भुगती जा चुकी दण्ड पर छोड़ दिया जाना चाहिए। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, जब उच्च न्यायालय ने 2017 में अपील पर निर्णय लिया, तो घटना पहले से ही अट्ठाईस वर्ष पुरानी थी। जब हम 2024 की इस अपील पर निर्णय ले रहे हैं (वर्ष 2018 की विशेष अनुमति याचिका से उद्भूत), घटना लगभग छत्तीस वर्ष पुरानी है।

14. जब उच्च न्यायालय का निर्णय सुनाया गया, तो कम से कम पांच अभियुक्त सत्तर वर्ष से अधिक आयु के थे, और उनमें से एक की आयु लगभग अस्सी वर्ष थी। उच्च न्यायालय द्वारा जुर्माने के रूप में प्रत्येक पर 16,000/- रुपये की पर्याप्त राशि लगाई गई है। इसलिए, उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करना उचित नहीं होगा।"

11. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता, विद्वान ए.जी.ए. को सुनने के पश्चात और आक्षेपित निर्णय और आदेश के साथ-साथ वर्तमान अपील में अंतर्विष्ट अभिकथनों का परिशीलन करने के पश्चात, यह न्यायालय यह ध्यान में रखते हुए कि वर्तमान वाद में घटना 20.07.1982 को हुई थी, इस प्रकार, घटना के बाद लगभग 44 वर्षों की लंबी अवधि बीत चुकी है। अपीलार्थी की आयु अब लगभग 79 वर्ष है, जो अपील के लंबित रहने के दौरान जमानत पर है, इसलिए, यह न्यायालय अपीलार्थी की दण्ड को बदलना उचित समझता है और उसकी दण्ड को उसके द्वारा पहले ही भुगती गई अवधि तक कम किया जाता है।

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



12. इस आदेश की एक प्रति विचारण न्यायालय के अभिलेख के साथ तत्काल संबंधित न्यायालय को प्रेषित की जाए।

13. पूर्वोक्त निर्देशों के साथ, वर्तमान अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है।

(न्यायमूर्ति डॉ. गौतम चौधरी)

11 अगस्त, 2026

मुस्तकीम

“अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”